आचार्य राजेश बेंजवाल

पंचांगों के दूषितमत खण्डनपूर्वक 20 अक्तूबर दीपावली सिद्धान्त स्थापन

14 October 2025

पंचांगों के दूषितमत खण्डनपूर्वक 20 अक्तूबर दीपावली सिद्धान्त स्थापन

Tantrakul

वाणीभूषण पंचांग के दीपावली मत का खंडन

सिद्धान्त: वाणीभूषण पंचांग द्वारा २१ अक्टूबर को दीपावली मनाने का दिया गया मत, शास्त्र के सूक्ष्म किन्तु निर्णायक सिद्धांतों की अनदेखी करने के कारण अग्राह्य है। **शास्त्र की सम्पूर्ण विवेचना के अनुसार दीपावली का पर्व २० अक्टूबर, २०२५ को ही मनाया जाना चाहिए।**

पूर्वपक्ष (जैसा वाणीभूषण पंचांग में प्रस्तुत है)

सर्वप्रथम, हम पूर्वपक्ष के तर्क को समझते हैं:

1. **मुख्य आधार:** अमावस्या तिथि २० और २१ अक्टूबर, दोनों दिनों में प्रदोष काल को प्राप्त कर रही है ।

2. **मुख्य नियम:** ऐसी स्थिति में (जब दोनों दिन प्रदोष में अमावस्या हो या न हो), शास्त्र का स्पष्ट निर्देश है कि दीपावली दूसरे दिन ही मनाई जाए ।

3. **प्रमाण:** इस नियम की पुष्टि के लिए **इयं प्रदोषव्यापिनी ग्राह्या, दिनद्वये सत्त्वाऽसत्त्वे परा** तथा धर्मसिन्धु का वचन "**परदिन एव, दिनद्वये वा प्रदोषव्याप्तौ परा...**" प्रस्तुत किया गया है ।

   "**परदिन एव, दिनद्वये वा प्रदोषव्याप्तौ परा। पूर्वत्रैव प्रदोषव्याप्तौ लक्ष्मीपूजादौपूर्वा, अभ्यंङ्ग स्नानादौ परा, एवमुभयत्र प्रदोषव्याप्त्यभावेऽपि।**"

यह तर्क पहली दृष्टि में शास्त्रसम्मत प्रतीत होता है, किन्तु यह विश्लेषण अधूरा है और कई महत्वपूर्ण शास्त्रीय नियमों का उल्लंघन करता है।

सिद्धान्तपक्ष: पूर्वपक्ष का खंडन एवं तंत्रकुलपंचांग पक्ष स्थापन

खंडन बिंदु १: "एक दण्ड व्याप्ति" और "एक दण्ड से कम स्पर्श" के भेद की उपेक्षा

पूर्वपक्ष का सम्पूर्ण तर्क इस एक मिथ्या आधार-वाक्य पर आधारित है कि अमावस्या "**दोनों दिनों में प्रदोषव्यापिनी है अत: दूसरे दिन की ग्रहण होगी**"। यहाँ शास्त्र के दो महत्वपूर्ण शब्दों के भेद को समझना आवश्यक है:

- **व्याप्ति:** तिथि का कर्मकाल में इतनी देर तक रहना कि पूजन आदि कर्म सम्पूर्ण हो सकें। यह एक सार्थक उपस्थिति है।
- **स्पर्श:** तिथि का कर्मकाल में क्षणिक या बहुत अल्प समय के लिए आना।

विश्लेषण:

Tantrakul

- **२० अक्टूबर:** अमावस्या अपराह्न ३:४७ से आरम्भ होकर **सम्पूर्ण प्रदोष काल** (लगभग ३ घंटे से अधिक) और **सम्पूर्ण निशीथ काल** में व्याप्त है। यह वास्तविक और सम्पूर्ण "**व्याप्ति**" है।
- **२१ अक्टूबर:** अमावस्या सायं ५:५५ पर समाप्त हो जाती है। प्रदोष काल लगभग ५:४० से आरम्भ होता है। अतः, प्रदोष काल में अमावस्या की उपस्थिति मात्र **लगभग १५ मिनट** की है। यह केवल "**दीपवाली के लिए शास्त्रों द्वारा निर्धारितन्यूनतम एक दण्ड से कम होने के कारण स्पर्श**" मात्र है, आवश्यक व्याप्ति नहीं।

अतिबहुतिथिव्याप्त्या युग्मे तिथिक्षयतः पुनः
नियम इह न स्याच्चेद् दर्शोऽथ भूतदिने भवेत्।
दण्डैकरजनीयोगे दर्शः स्यात्तु परेऽहनि तदा
विहाय पूर्वेद्युः परेऽहनि सुखरात्रिके॥

शास्त्र का निर्णायक सिद्धांत है कि **दीपवाली के लिए अमावस्या** कर्मकाल में व्याप्त तभी मानी जाती है जब उसकी उपस्थिति **न्यूनतम एक दण्ड (अर्थात् २४ मिनट)** की हो। चूँकि २१ अक्टूबर को अमावस्या की उपस्थिति एक दण्ड से बहुत कम है, अतः उसे शास्त्रीय दृष्टि से **दीपवाली हेतु "प्रदोषव्यापिनी**" मानना ही अशुद्ध है। जब दूसरा दिन प्रदोषव्यापिनी है ही नहीं, तो "**दोनों दिन व्याप्ति**" का नियम लागू ही नहीं हो सकता।

खंडन बिंदु २: निर्णायक-सूत्रों का गलत विनियोग

पूर्वपक्ष ने दिनद्वये सत्त्वाऽसत्त्वे परा जैसे जो प्रमाण दिए हैं, वे "**निर्णायक-सूत्र**" हैं। इन सूत्रों का प्रयोग केवल तभी होता है जब संघर्ष में दोनों पक्ष **तुलनीय** और **बराबर के योग्य** हों।

Tantrakul

- **तर्क:** क्या २० अक्टूबर (जहाँ ३+ घंटे की प्रदोष व्याप्ति और सम्पूर्ण निशीथ व्याप्ति है) और २१ अक्टूबर (जहाँ मात्र १५ मिनट की नगण्य उपस्थिति है) तुलनीय हैं? कदापि नहीं।
- **निष्कर्ष:** यह स्थिति एक वास्तविक "संघर्ष" की नहीं, बल्कि एक दिन की **सर्वांगीण श्रेष्ठता** और दूसरे दिन की **अयोग्यता** की है। ऐसी असमान स्थिति में निर्णायक-सूत्र लगाना तर्क और शास्त्र, दोनों के विरुद्ध है। यह वैसा ही है जैसे एक पूर्ण रोटी और एक कण में "कौन बेहतर है" का निर्णय करने के लिए विशेष नियम लगाना। श्रेष्ठता स्वतः सिद्ध है।

खंडन बिंदु ३: निशीथ काल की महत्ता को गौण मानना

पूर्वपक्ष ने निशीथ काल का उल्लेख तो किया है, परन्तु उसकी महत्ता को कम कर दिया है। उन्होंने जयसिंहकल्पद्रुमकार का जो वचन दिया है (**उभये दिन प्रदोषव्याप्त्यभावे ऽर्द्धरात्रिव्यापिनी (पूर्वदिवसीया) ग्राह्या, तस्या लक्ष्म्यागमन-कालत्वाभिधानात्।**), वह वास्तव में निशीथ काल के महत्व को स्थापित करता है। उसका अर्थ है कि यदि दोनों दिन प्रदोषव्याप्ति न हो, **तब भी** अर्धरात्रि की व्याप्ति के आधार पर निर्णय लिया जा सकता है।

शास्त्र का आदर्श वाक्य है: **प्रदोषार्धरात्रव्यापिनी मुख्या** (वह अमावस्या मुख्य है जो प्रदोष और अर्धरात्रि दोनों में व्याप्त हो)।

- **२० अक्टूबर:** यह दिन इस "**आदर्श स्थिति**" को अक्षरशः पूर्ण करता है।
- **२१ अक्टूबर:** यह दिन इस आदर्श स्थिति के निकट भी नहीं है।

जब शास्त्र की आदर्श स्थिति २० अक्टूबर को सहज ही प्राप्त हो रही है, तो उसका त्याग करके एक ऐसे दिन को चुनना जिसमें कर्मकाल का स्पर्श भी खंडित और अपर्याप्त हो, किसी भी प्रकार से शास्त्रसम्मत नहीं है।

Tantrakul

अंतिम सिद्धान्त

वाणीभूषण पंचांग का मत इसलिए त्रुटिपूर्ण है क्योंकि वह:

1. एक दण्ड से कम की प्रदोष व्याप्त अमावस्या को निर्धारण हेतु योग्य मानता है।
2. असमान और अतुलनीय दिनों पर "**निर्णायक-सूत्र**" लागू करता है।
3. प्रदोष और निशीथ काल की संयुक्त श्रेष्ठता के आदर्श नियम की उपेक्षा करता है।

अतः, सभी प्रमाणों की विस्तृत मीमांसा के पश्चात् यह सिद्ध होता है कि **दीपावली का महापर्व २० अक्टूबर, २०२५, सोमवार को ही मनाया जाना चाहिए।**

इस प्रकार वाणीभूषण पंचांग के दूषित मत का भंजन हो तंत्रकुल का शास्त्रीय प्रमाणसिद्ध मत स्थापित होता है।

Tantrakul

डॉ. रमेशचंद्र जोशीजी प्रधान सम्पादक श्रीताराप्रसाद दिव्य पंचांग का 21 अक्तूबर को दीपावली मत का खण्डन

अब हम डॉ. रमेशचंद्र जोशीजी के पक्ष का एक-एक करके विश्लेषण और खंडन करेंगे। और विधा भी स्थापित करेंगे कि उत्तराखण्ड में कोई पर्वादि निर्णय किसी भी पंचांगकार अथवा सभा आदि ने लेना है तो खण्डनमण्डन किस प्रकार शास्त्रों के

सन्दर्भप्रदानपूर्वक एवं विधिवत् सभी पक्षों को स्पष्ट कर उनका खण्डन करना चाहिए। एक विधिवाक्य की पूंछ पकडर कर निर्णय करना हमारे रहते हुये अब सम्भव नहीं होगा।

डॉ. जोशीजी का प्रथम पक्ष:

कथन: "प्रथम नियम: धर्म सिंधुकार का स्पष्ट निर्णय है कि जिस दिन सूर्योदय से लेकर सूर्यास्त तक अमावस्या व्याप्त हो, उसी दिन को अमावस्या मानने में कोई संदेह नहीं होना चाहिए। इस नियम के अनुसार, 21 अक्टूबर को सूर्योदय से सूर्यास्त तक अमावस्या है, अतः इसी दिन दीपावली मनानी चाहिए।"

डॉ. जोशीजी के प्रथम पक्ष का खंडन

डॉ. जोशीजी का यह तर्क कि "सूर्योदय से लेकर सूर्यास्त तक अमावस्या व्याप्त हो" तो उसी दिन दीपावली मनानी चाहिए, **दीपोत्सव के मुख्य कर्मकाल** यानी **प्रदोष काल** की अनिवार्यता को पूरी तरह से उपेक्षित करता है। दीपावली का निर्णय केवल सूर्योदय या सूर्यास्त में तिथि की व्याप्ति से नहीं होता, बल्कि उसके मुख्य कर्मकाल यानी प्रदोष काल में तिथि की उपस्थिति से होता है ।

1. कर्मकाल-व्याप्ति का महत्व

धर्मशास्त्र में पर्वों का समय निर्धारण **'कर्मकाल'** के आधार पर किया जाता है, जो उस कृत्य के लिए निर्धारित मुख्य समय होता है । दीपोत्सव का मुख्य कर्मकाल **प्रदोष** है, जैसा कि **निर्णयसिंधु** में कहा गया है: **"प्रदोषार्धरात्रव्यापिनी मुख्या" ।** यह वचन स्पष्ट करता है कि वह अमावस्या मुख्य है जो प्रदोष और अर्धरात्रि दोनों में व्याप्त हो। हालांकि इसमें भी **निर्णयसिन्धुकार** प्रदोष को ही प्रमुख मानता है।

निर्णयसिंधु के अनुसार: **"प्रदोषसमये लक्ष्मीं पूजयित्वा ततः क्रमात्, दीपवृक्षाश्च दातव्याः शक्त्या देवगृहेषु च।"** इसका अर्थ है कि प्रदोष काल में लक्ष्मी का पूजन करना चाहिए।

डॉ. जोशीजी का तर्क केवल सूर्योदय से सूर्यास्त तक की व्याप्ति पर जोर देता है, जो दीपोत्सव के लिए आवश्यक **प्रदोष काल** की उपेक्षा करता है। यदि किसी दिन सूर्योदय से सूर्यास्त तक अमावस्या व्याप्त हो, पर वह प्रदोष काल को स्पर्श न करे, तो वह दिन दीपावली के लिए योग्य नहीं माना जा सकता।

2. मीमांसा के नियम-पदानुक्रम का उल्लंघन

डॉ. जोशीजी का निर्णय मीमांसा के **पदानुक्रमित** सिद्धांत के विरुद्ध है । मीमांसा के अनुसार, एक सामान्य या **गुणात्मक वचन** की तुलना में एक विशिष्ट और **संशय-निवारक विधि-वाक्य** अधिक बलवान होता है ।

डॉ. जोशीजी का नियम: यह एक सामान्य, गुणात्मक वचन पर आधारित है कि "सूर्योदय से लेकर सूर्यास्त तक अमावस्या हो तो उसी दिन दीपावली मनानी चाहिए"।

सिद्धांत: दीपोत्सव का निर्णय करने के लिए पहले **प्रदोष-व्याप्ति की योग्यता** देखनी चाहिए । यदि दो दिन यह योग्यता पूरी हो, तो **दण्डैकरजनीयोगे...** जैसे **विधि-वाक्य** का अनुसरण करना चाहिए।

स्पष्ट है कि **"प्रदोषार्धरात्रव्यापिनी मुख्या"** तथा **"दण्डैकरजनीयोगे दर्शः स्यात्तु परेऽहनि"** जैसे विशिष्ट वचन उपलब्ध हैं, जो केवल सूर्योदय से सूर्यास्त तक की व्याप्ति मात्र से निर्णय का बाध करते हैं। **दण्डैकरजनीयोगे दर्शः स्यात्तु परेऽहनि"**

Tantrakul

का बाध कोई निबन्धकार नहीं कर सकता क्योंकि ये पुराचवचन है, स्कन्दपुराण के कार्तिक महात्म्य का ये वचन है।

इस प्रकार, **डॉ. जोशीजी का प्रथम तर्क,** जो केवल सूर्योदय से सूर्यास्त तक की व्याप्ति पर जोर देता है, दीपोत्सव के लिए आवश्यक कर्मकाल **(प्रदोष काल)** की उपेक्षा करता है और उन विशिष्ट निर्णायक विधियों को दरकिनार करता है जो दो दिनों के संघर्ष की स्थिति में दिए गए हैं। यह मीमांसा की पदानुक्रमित प्रक्रिया का पालन नहीं करता और **इसलिए शास्त्रसम्मत नहीं है।**

डॉ. जोशीजी का द्वितीय पक्ष

यदि अमावस्या तिथि दोनों दिन प्रदोष काल में व्याप्त हो, तो दूसरे दिन की अमावस्या ही ग्राह्य होती है। इस नियम में **धर्मसिंधुकार** ने यह नहीं लिखा कि किस दिन प्रदोष काल में तिथि की व्याप्ति कम है या अधिक; केवल यही कहा गया है कि दोनों दिन व्याप्ति होने पर दूसरे दिन की प्रदोष व्यापिनी अमावस्या को ही मान्यता दी गई है।

डॉ. जोशीजी के द्वितीय नियम का खंडन

डॉ. रमेशचंद्र जोशीजी का यह तर्क कि यदि अमावस्या दोनों दिन प्रदोष काल में व्याप्त हो, तो दूसरे दिन की अमावस्या ही ग्राह्य होती है, **अधूरा और भ्रामक** है। यह नियम दीपोत्सव के निर्णय के लिए आवश्यक **न्यूनतम शर्तों** की उपेक्षा करता है। आपके शोध-पत्र में दी गई **मीमांसा** के आधार पर इसका खंडन इस प्रकार है:

1. न्यूनतम योग्यता की अनदेखी

डॉ. जोशीजी का यह नियम एक महत्वपूर्ण शर्त को छोड़ देता है: **द्वितीय दिवस की अमावस्या में न्यूनतम एक दण्ड (लगभग 24 मिनट) की रजनी में व्याप्ति अनिवार्य**

है।"यदि दो दिवसों पर प्रदोषव्याप्ति हो, तो **दण्डैकरजनीयोगे...** के साक्षात् विधि-वचन के अनुसार, परा तिथि अर्थात् द्वितीय दिवस ही लक्ष्मी पूजन के लिए ग्राह्य है, **परन्तु शर्त यह है कि उसमें न्यूनतम एक दण्ड (24 मिनट) की रजनी व्याप्ति हो**।" यह शर्त स्वयं **निर्णयसिंधु** और **धर्मसिंधु** में वर्णित है **"दण्डैकरजनीयोगे दर्शः स्यात्तु परेऽहनि"** इसका बाध कोई निबन्धकार नहीं कर सकता क्योंकि ये पुराचवचन है, स्कन्दपुराण के कार्तिक महात्म्य का ये वचन है।**।**

दण्डैकरजनीयोगे दर्शः स्यात्तु परेऽहनि ।
तदा विहाय पूर्वेद्युः परेऽहनि सुखरात्रिके ॥ (तिथितत्त्व) (स्कन्दपुराण के कार्तिक महात्म्य)

- **दण्डैकरजनीयोगे...** का अर्थ है: "यदि रात्रि के योग में एक दण्ड (24 मिनट) का योग हो, तो अमावस्या अगले दिन होती है" ।
- डॉ. जोशीजी का यह कहना कि **"धर्म सिंधुकार ने यह नहीं लिखा कि किस दिन प्रदोष काल में तिथि की व्याप्ति कम है या अधिक"** पूरी तरह से गलत है। यह नियम एक दण्ड की न्यूनतम व्याप्ति की शर्त पर ही लागू होता है ।

2. गौण वचन का अप्रासंगिक प्रयोग

यह भी स्पष्ट है कि **"त्रियामगा... जैसे वचनों की वैशाखी का प्रयोग यहाँ अप्रासंगिक है"**। इसका अर्थ है कि केवल **"दोनों दिन प्रदोष में अमावस्या होतो परा लेने का निर्णय"** पर्याप्त नहीं है। इस नियम का उपयोग केवल तभी करना चाहिए जब प्रथम दिन की अमावस्या की व्याप्ति और द्वितीय दिवस की न्यूनतम 24 मिनट की व्याप्ति की शर्तें पूरी हों।

- यदि 21 अक्टूबर को प्रदोष काल में अमावस्या की व्याप्ति एक दण्ड से बहुत कम (उदाहरण के लिए 12 मिनट) हो, तो वह **दण्डैकरजनीयोगे...** की शर्त को

पूरा नहीं करती। ऐसी स्थिति में, द्वितीय दिवस निर्णायक सूत्र के बल से वंचित हो जाता है और प्रथम दिवस (20 अक्टूबर), जिसमें प्रदोष-व्याप्ति अधिक सशक्त है, स्वतः ही शास्त्र-सम्मत सिद्ध हो जाता है।

इस प्रकार, **डॉ. जोशीजी का द्वितीय नियम अधूरा** है, क्योंकि यह "परा तिथि" (बाद वाली तिथि) को चुनने के लिए आवश्यक **न्यूनतम शर्तों** का उल्लेख नहीं करता है। उनका तर्क यह मानता है कि दोनों दिन प्रदोष में अमावस्या होने पर हमेशा पर दिन ही को ही दीपावली मनाई जाएगी, जो **शास्त्र की सूक्ष्म मीमांसा के विपरीत है इसलिए शास्त्रसम्मत नहीं है।**

डॉ. जोशीजी का तृतीय पक्ष

यदि दूसरे दिन अमावस्या तीन प्रहर से अधिक समय तक रहे और उसके अगले दिन प्रतिपदा का मान अमावस्या के मान से अधिक हो (अर्थात प्रतिपदा वृद्धिगामिनी हो), तो महालक्ष्मी पूजन आदि सभी कार्य दूसरे दिन ही किए जाने चाहिए। यह नियम उन क्षेत्रों के लिए भी संदेह का निवारण करता है जहाँ सूर्यास्त के समय अमावस्या समाप्त हो रही हो।

डॉ. जोशीजी के तृतीय नियम का खंडन

डॉ. रमेशचंद्र जोशीजी का यह तर्क कि यदि दूसरे दिन अमावस्या तीन प्रहर से अधिक समय तक रहे और प्रतिपदा वृद्धिगामिनी हो, तो दूसरे दिन ही महालक्ष्मी पूजन करना चाहिए, अधूरा और भ्रामक है। यह तर्क **'पुरुषार्थचिन्तामणि'** के वचन पर आधारित है, जिसे **'धर्मसिंधु'** में एक विशेष और गौण स्थिति के लिए उद्धृत किया गया है। आपके शोध-पत्र की मीमांसा के आधार पर इसका खंडन इस प्रकार है:

1. नियम का सीमित और गौण संदर्भ

Tantrakul

डॉ. जोशीजी जिस नियम का उल्लेख कर रहे हैं, वह दीपावली निर्णय का मुख्य सूत्र नहीं है। आपके शोध-पत्र के अनुसार, यह नियम केवल उसी स्थिति के लिए है जब दोनों दिन प्रदोष-व्याप्ति न हो। धर्मसिंधु के टीकाकार स्वयं कहते हैं कि "ऐसा भान होता है" ("भाति") कि यह नियम केवल **'उभयत्र प्रदोषाव्याप्तिपक्षेऽपि'** यानी "दोनों ही दिन प्रदोष-व्याप्ति न हो" वाले पक्ष में ही लिया जा सकता है ।

- शास्त्रार्थ: यह नियम पूर्वपक्ष में उठाया गया है, सिद्धांत के रूप में नहीं। यह एक सैद्धांतिक संभावना है, न कि एक सामान्य, व्यावहारिक निर्देश ।
- इसका प्रयोग तभी करना चाहिए जब पूर्वोक्त मुख्य नियम (**प्रदोषार्धरात्रव्यापिनी मुख्या एवं दण्डैकरजनीयोगे**) किसी कारण से लागू न हो पा रहे हों ।

एतन्मते उभयत्र प्रदोषाव्याप्तिपक्षेऽपि परत्र दर्शस्य सार्धयामत्रयाधिकव्यापित्वात् परैव युक्तेति भाति।

इस मत **(पुरुषार्थचिंतामणि के मत)** के अनुसार, जिस पक्ष में दोनों ही दिन प्रदोष-व्याप्ति न हो, उसमें भी यदि दूसरे दिन अमावस्या साढ़े तीन प्रहर **(लगभग १०.५ घंटे)** से अधिक व्याप्त हो, तो 'परा' (बाद वाली) तिथि ही उचित है, ऐसा प्रतीत होता है (भाति)। यहां धर्मसिन्धुकार भी मत है कि यदि दोनों ही दिन प्रदोषव्याप्ति न हो तो इस मत को ग्रहण किया जा सकता है। यह कोई मुख्य निर्णायक सूत्र नहीं है और इस पक्ष का खण्डन होता है।

2. मुख्य नियमों की उपेक्षा

डॉ. जोशीजी का तृतीय नियम दीपोत्सव के निर्णय के मुख्य और अनिवार्य सिद्धांतों की उपेक्षा करता है:

Tantrakul

- प्रदोष-व्याप्ति की अनिवार्यता: दीपोत्सव का निर्णय केवल प्रदोष काल में अमावस्या की सशक्त उपस्थिति पर आधारित है। यदि दोनों दिन प्रदोष-व्याप्ति हो रही है, तो सबसे पहले **दण्डैकरजनीयोगे...** नियम को लागू करना चाहिए, न कि सीधे इस गौण नियम पर जाना चाहिए ।

- आदर्श स्थिति का त्याग: यदि 20 अक्टूबर को प्रदोष और अर्धरात्रि दोनों कालों का सहज संयोग सिद्ध हो रहा है, तो इस आदर्श स्थिति को छोड़कर, किसी गौण नियम के आधार पर 21 अक्टूबर को दीपावली मनाना शास्त्र के मूल तात्पर्य के साथ असंगत लगता है ।

इस प्रकार, **डॉ. जोशीजी का तृतीय नियम एक गौण और सीमित परिस्थिति का नियम है,** जिसे वे एक सार्वभौमिक सिद्धांत के रूप में प्रस्तुत कर रहे हैं। यह उनके निर्णय को कमजोर बनाता है, क्योंकि यह दीपावली के निर्णय के लिए स्थापित मुख्य और अनिवार्य सिद्धांतों की अनदेखी करता है।

डॉ. जोशीजी का चतुर्थ पक्ष

धर्म ग्रंथों में इस बात पर भी बल दिया गया है कि चतुर्दशी से लेकर तीन दिनों के भीतर जिस दिन अमावस्या का संयोग स्वाति नक्षत्र के साथ हो, वह दिन विशेष रूप से शुभ और मंगलदायक होता है। 21 अक्टूबर को अमावस्या के साथ स्वाति नक्षत्र का यह दुर्लभ संयोग भी बन रहा है, जो इस तिथि की शुभता को और अधिक बढ़ाता है।

डॉ. जोशीजी के चतुर्थ नियम का खंडन

डॉ. रमेशचंद्र जोशीजी का यह तर्क कि अमावस्या का स्वाति नक्षत्र के साथ संयोग शुभ होता है, दीपावली के निर्णय का **मुख्य शास्त्रीय आधार** नहीं है। यह नियम दीपोत्सव के लिए आवश्यक **कर्मकाल-व्याप्ति** (प्रदोष काल) की अनिवार्यता और **निर्णायक विधियों** के पदानुक्रम को पूरी तरह से नजरअंदाज करता है।

1. गौणता और अप्रसंगिकता

दीपावली पर्व का निर्णय मुख्य रूप से **तिथि** और उसके **कर्मकाल** के आधार पर होता है, न कि नक्षत्रों के संयोग पर। हालाँकि किसी विशेष नक्षत्र का संयोग शुभ माना जा सकता है, यह दीपोत्सव के निर्णय के लिए निर्णायक तत्व नहीं है। यह एक **गुणात्मक** और **गौण** कारक है, जबकि **प्रदोष-व्याप्ति** एक **विधि-वाक्य** है।

- **मीमांसा का सिद्धांत:** मीमांसा दर्शन यह स्थापित करता है कि एक **सामान्य, गुणात्मक वचन (अर्थवाद)** की अपेक्षा एक **विशिष्ट, संशय-निवारक विधि-वाक्य (विधि)** अधिक बलवान होता है।
- दीपोत्सव के निर्णय के लिए, **प्रदोष-व्याप्ति** और **दण्डैकरजनीयोगे...** जैसे नियम मुख्य हैं। नक्षत्रों का संयोग केवल तभी प्रासंगिक हो सकता है जब अन्य सभी मुख्य नियमों के आधार पर निर्णय लेना संभव न हो।

2. भ्रम की स्थिति

डॉ. जोशीजी का यह तर्क कि **"स्वाति नक्षत्र का यह दुर्लभ संयोग भी बन रहा है, जो इस तिथि की शुभता को और अधिक बढ़ाता है"**, जनता में भ्रम पैदा कर सकता है। यह लोगों को यह सोचने पर मजबूर कर सकता है कि नक्षत्र का संयोग ही निर्णय का मुख्य कारण है, जबकि यह एक अतिरिक्त कारक मात्र है।

- यदि 20 अक्टूबर को अमावस्या प्रदोष और अर्धरात्रि दोनों में व्याप्त हो, जो कि **"प्रदोषार्धरात्रव्यापिनी मुख्या"** के अनुसार **आदर्श स्थिति** है, तो उस आदर्श स्थिति का त्याग केवल इसलिए करना, क्योंकि 21 अक्टूबर को स्वाति नक्षत्र का संयोग है, शास्त्रीय पदानुक्रम के विरुद्ध है।

इस प्रकार, **डॉ. जोशीजी का चौथा नियम एक गौण और अप्रासंगिक तर्क है,** जो दीपोत्सव के निर्णय के लिए आवश्यक **मुख्य और अनिवार्य शास्त्रीय सिद्धांतों** की

Tantrakul

उपेक्षा करता है। यह उनके निर्णय को कमजोर बनाता है, क्योंकि यह नक्षत्र के संयोग को अनावश्यक महत्व देता है, जबकि मुख्य नियम कुछ और ही कहते हैं।

अन्य सिद्धान्त तो इनके केवल फुटकर सिद्धान्त हैं जिनसे लक्ष्मीपूजन के मुख्यपर्व निर्णय पर कोई अन्तर नहीं पडता।

डॉ. चन्द्रमौलि रैणा एवं पं. विश्व कुमार शर्मा मत भंजन

डॉ. चन्द्रमौलि रैणा एवं पं. विश्व कुमार शर्मा द्वारा प्रस्तुत "प्रदोषार्धरात्रव्यापिनी मुख्या" "दण्डैकरजनीयोगे" आदि मुख्य कर्मकाल विधायक सूत्रों से प्राप्त तिथि को छोड उदयव्यापिनी/ साकल्यापादिता आदि गौण नियमों जैसे दुर्बल मत का खण्डन।

डॉ. चन्द्रमौलि रैणा एवं पं. विश्व कुमार शर्मा द्वारा प्रस्तुत पक्ष, कि **"साकल्यापादिता तिथि"** के सामान्य सिद्धांत के आधार पर २१ अक्टूबर को दीपावली मनाना शास्त्र सम्मत है, एक पूर्वपक्ष मात्र है जो धर्मशास्त्र-निर्णय की सूक्ष्म मीमांसा एवं विधि-वाक्यों के पदानुक्रम की गहन समीक्षा में ठहर नहीं पाता। यह इनकी मीमांसा ग्रन्थों की अल्पज्ञता को प्रदर्शित करता है। यह अभी तक प्राप्त सभी तर्कों में **दुर्बलतं तर्क एवं प्रमाण** था जिसके खण्डन में प्रवृत्ति की इच्छा भी नहीं हो रही थी। उनका मत मुख्य रूप से दो शास्त्रीय सिद्धांतों के अनुचित प्रयोग पर आधारित है, जिनका यहाँ क्रमशः खंडन प्रस्तुत है।

Tantrakul

1. **उदयव्यापिनी एवं त्रिमुहूर्त-व्यापिनी तिथि (साकल्यापादिता) के सामान्य नियम का दीपावली पर आरोपण का खंडन**

उनका पक्ष: उन्होंने **"यां तिथिं समनुप्राप्य उदयं याति भास्करष्"** तथा **"यां प्राप्यास्तमुपैत्यर्कः सा चेत्स्यात्रि मुहूर्तिका"** आदि श्लोकों के आधार पर यह स्थापित करने का प्रयास किया है कि यदि कोई तिथि सूर्योदय पर उपस्थित हो और तीन मुहूर्त तक विद्यमान रहे, तो वह **'साकल्यापादिता'** होकर संपूर्ण कर्मकाल के लिए मान्य हो जाती है, भले ही गणितागत रूप से वह कर्मकाल में अत्यंत अल्प या अनुपस्थित क्यों न हो। यह अभी तक का सबसे कमजोर तर्क हमने देखा है, इसप्रकार के दुर्बल तर्कों को हम तो खण्डन योग्य भी नहीं मानते। खण्डन करने के लिए भी तर्क में कुछ गुरुत्व होना चाहिए।

सिद्धान्त पक्ष:

यह तर्क **"अतिव्याप्ति-दोष"** से ग्रस्त है, अर्थात एक सामान्य नियम को एक ऐसी विशिष्ट परिस्थिति में लागू करना जहाँ उसके लिए एक विशेष-नियम पहले से ही उपस्थित हो।

(क) सामान्य-विधि बनाम विशेष-विधि का सिद्धांत:

मीमांसा का यह सर्वमान्य सिद्धांत है कि **"विशेषविधिः सामान्यविधेः बलीयान् भवति"** अर्थात विशेष कार्य के लिए दिया गया विशिष्ट नियम, सामान्य कार्यों के लिए दिए गए सामान्य नियम से अधिक बलवान होता है। **'साकल्यापादिता तिथि'** का सिद्धांत स्नान, दान, सामान्य व्रत आदि के लिए एक **'सामान्य-विधि'** है। जबकि **दीपोत्सवलक्ष्मीपूजन एक 'विशिष्टकर्म'** है जिसके लिए शास्त्रकारों ने एक **विशिष्ट कर्मकाल** और विशिष्ट नियम दिए हैं।

(ख) दीपावली का विशिष्ट कर्मकाल 'प्रदोष' है:

Tantrakul

दीपावली का निर्णय **उदयव्यापिनी तिथि** से नहीं, अपितु **प्रदोषव्यापिनी तिथि** से होता है। स्वयं उनके द्वारा उद्धृत श्लोक ही इस बात का प्रमाण है:

दीपान्दत्त्वा प्रदोषे तु लक्ष्मीं पूज्य यथाविधि।

अब स्वयं ही विशिष्ट नियम देकर अपने ही दिये सिद्धान्त का स्वयं ही खण्डन कर देते हैं।

निर्णयसिन्धु और धर्मसिंधु जैसे ग्रंथ एकमत से कहते हैं कि दीपावली **'प्रदोष-प्रधाना'** है। **"प्रदोषार्धरात्रव्यापिनी मुख्या"** जैसे वचन यह स्पष्ट करते हैं कि जिस अमावस्या की प्रदोष और अर्धरात्रि में वास्तविक (गणितागत) उपस्थिति हो, वही मुख्य है। एक **साकल्यापादिता तिथि**, प्रदोष काल में तिथि की वास्तविक भौतिक उपस्थिति का स्थान नहीं ले सकती। यदि ऐसा होता तो **प्रदोषव्याप्ति** के नियम का कोई अर्थ ही नहीं रह जाता।

2. "साकल्यापादिता" के तर्क का "दण्डैकरजनीयोगे..." विशेष-विधि द्वारा साक्षात बाध

उनका पक्ष: उनका तर्क है कि साकल्यापादिता तिथि कर्मकाल को पूर्णतया व्याप्त कर लेती है, अतः गणितागत तिथि की अल्पता से कोई फर्क नहीं पड़ता।

सिद्धान्त पक्ष:
इस तर्क का साक्षात बाध उस विशेषनियम से होता है जो शास्त्रकारों ने ठीक इसी प्रकार के संशय के निवारण हेतु बनाया है, जब अमावस्या दो दिन प्रदोष को स्पर्श करे।

तिथितत्त्व का प्रसिद्ध वचन जो कि **साक्षात पुराण वचन होने से** किसी भी **निबन्धकार** द्वारा बाधित नहीं किया जा सकता है:

**दण्डैकरजनीयोगे दर्शः स्यात्तु परेऽहनि।
तदा विहाय पूर्वेद्युः परेऽहनि सुखरात्रिके॥**

इस श्लोक की मीमांसा:

यह श्लोक एक '**अपवादविधि'** है। यह स्पष्ट रूप से निर्देश देता है कि यदि अमावस्या दूसरे दिन रजनी में एक दण्ड (लगभग २४ मिनट) तक भी उपस्थित हो, तभी पूर्व दिन को छोड़कर दूसरे दिन **दीपावली** ('सुखरात्रि') मनानी चाहिए।

अब विचार करें: यदि **'साकल्यापादिता'** का सामान्य नियम ही दीपावली पर लागू होता, तो शास्त्रकारों को **"एक दण्ड"** की यह गणितीय शर्त लगाने की क्या आवश्यकता थी? वे सरलता से कह सकते थे कि जिस दिन **त्रिमुहूर्तव्यापिनी अमावस्या हो**, उसी दिन पूजन करें।

"एक दण्ड" की यह शर्त ही इस बात का अकाट्य प्रमाण है कि दीपावली के निर्णय में प्रदोष काल में तिथि की **'गणितागत व्याप्ति'** ही निर्णायक है, न कि **'साकल्यापादिता'** की काल्पनिक व्याप्ति। इस विशिष्ट वचन के होते हुए, साकल्यापादिता के सामान्य नियम का आश्रय लेना, शास्त्र के मर्म को न समझने के समान है।

स्कन्द पुराण के आधार पर 'त्रिमुहूर्त' एवं 'युग्मवाक्य' के तर्कों का खंडन

२१ अक्टूबर के पक्ष में दिए गए मत का आधार कुछ सामान्य नियम और फलश्रुति/दोषश्रुति के वचन हैं। किन्तु जब हम इन तर्कों को स्कन्द पुराण के इसी 'दीपावलीकृत्यवर्णनम्' अध्याय की कसौटी पर कसते हैं, तो वे स्वतः ही निराधार सिद्ध हो जाते हैं। स्कन्द पुराण न केवल इन तर्कों को अप्रत्यक्ष रूप से काटता है, बल्कि एक ऐसा **ब्रह्मास्त्र-रूपी निर्णायक श्लोक** भी प्रदान करता है जो इस पूरे विवाद को समाप्त कर देता है।

Tantrakul

1. 'त्रिमुहूर्त नियम' का खंडन: स्कन्द पुराण के अनुसार दीपावली प्रदोष-प्रधाना है, दिन-प्रधाना नहीं।

विपक्ष का तर्क: अमावस्या दिन के अंतिम तीन मुहूर्तों (सूर्यास्त से पूर्व) में विद्यमान होनी चाहिए।

स्कन्द पुराण द्वारा खंडन: यह तर्क स्कन्द पुराण के वचनों के सीधे-सीधे विरुद्ध है। स्कन्द पुराण बार-बार और स्पष्ट रूप से कहता है कि दीपावली के मुख्य कृत्य **'प्रदोष काल'** (सूर्यास्त के पश्चात) में होने चाहिए, न कि दिन के अंतिम मुहूर्तों में।

स्कन्द पुराण (श्लोक ७५):
ततः प्रदोषसमये पूजयेदिन्दिरां शुभाम् । अर्थ: "उसके बाद प्रदोष काल में शुभ लक्ष्मी का पूजन करना चाहिए।"

स्कन्द पुराण (श्लोक ९२):
दीपदानं ततः कुर्यात् प्रदोषे च तथोल्मुकम् । अर्थ: "तत्पश्चात प्रदोष काल में दीपदान और उल्का (मशाल) भ्रमण करना चाहिए।"

स्कन्द पुराण (श्लोक ९५):
सर्वं पुर मलङ्कृत्य प्रदोषे तदनन्तरम् । ब्राह्मणान् भोजयित्वाSSदौ... अर्थ: "संपूर्ण नगर को अलंकृत करके, उसके बाद प्रदोष काल में पहले ब्राह्मणों को भोजन कराकर"

निष्कर्ष: जब स्कन्द पुराण स्वयं तीन-तीन बार दीपावली के मुख्य कर्म (लक्ष्मी पूजन, दीपदान) का समय 'प्रदोष काल' बता रहा है, तो किसी अन्य स्मृति का 'दिन के त्रिमुहूर्त' का सामान्य नियम यहाँ कैसे लागू हो सकता है? स्कन्द पुराण का यह विशिष्ट-विधान उस सामान्य-नियम का स्वतः ही बाध कर देता है।

2. 'युग्मवाक्य' एवं 'रिक्ता-तिथि-दोष' का खंडन: स्कन्द पुराण का अंतिम निर्णायक-श्लोक सभी अर्थवादों पर भारी है।

विपक्ष का तर्क: 'अमावस्या-प्रतिपदा' का युग्म महापुण्यकारी है और **'चतुर्दशी-अमावस्या' का रिक्ता-युक्त युग्म महा-अनिष्टकारी है**, जिससे राष्ट्र पर आपदा आती है। यह उनका सबसे प्रबल और भय दिखाने वाला तर्क है।

स्कन्द पुराण द्वारा खंडन: यह संपूर्ण तर्क **'अर्थवाद' (फल/दोष का कथन)** पर आधारित है, **'विधि-वाक्य' (निर्णय का सूत्र)** पर नहीं। स्कन्द पुराण के ऋषियों ने संभवतः इसी संशय का पूर्वानुमान कर लिया था, इसीलिए उन्होंने इस पूरे अध्याय के अंत में, सभी कथाओं और विधियों को बताने के बाद, एक **अंतिम एवं स्पष्ट निर्णायक-श्लोक** प्रदान किया है जो ऐसे सभी संशयों को समाप्त कर देता है।

- **स्कन्द पुराण (श्लोक १०४) - शास्त्रार्थ का ब्रह्मास्त्र:**
  दण्डैकरजनीयोगे दर्शः स्यात्तु परेऽहनि । तदा विहाय पूर्वेद्युः परेऽह्नि सुखरात्रिका ॥ अर्थ: "जब दर्श (अमावस्या) का रात्रि में एक दण्ड (२४ मिनट) का भी योग हो, तो वह अगले दिन होती है। तब पूर्व दिन को छोड़कर अगले दिन ही सुखरात्रि (दीपावली) होती है।"

इस श्लोक की मीमांसा और विपक्ष के तर्क का पूर्ण खंडन:

1. **सर्वोच्च निर्णायक सूत्र:** यह श्लोक स्कन्द पुराण का इस विषय पर अंतिम निर्णय है। यह किसी भी प्रकार के युग्म (शुभ या अशुभ), रिक्ता तिथि, नक्षत्र या अन्य किसी भी गुण-दोष की बात नहीं करता।
2. **एकमात्र गणितीय शर्त:** यह निर्णय के लिए केवल एक और एकमात्र शर्त रखता है - दूसरे दिन प्रदोष काल में अमावस्या की **वास्तविक (गणितागत) उपस्थिति** कम से कम **एक दण्ड** होनी चाहिए।
3. **अर्थवाद का खंडन:** यदि चतुर्दशी-युक्त अमावस्या इतनी ही अनिष्टकारी होती, तो क्या वालखिल्य मुनि यह निर्णायक सूत्र देते? वे सीधे कह देते कि "चतुर्दशी-युक्त अमावस्या को हर हाल में त्याग देना चाहिए।" किन्तु उन्होंने ऐसा नहीं कहा। उन्होंने एक गणितीय सूत्र दिया, जिसका अर्थ है कि यदि

उनकी दी हुई शर्त (एक दण्ड की व्याप्ति) पूरी न हो, तो चतुर्दशी-युक्त अमावस्या को ही ग्रहण करना पड़ेगा, और वही शास्त्र-सम्मत होगा।

4. **दोष का परिहार:** शास्त्र द्वारा आदिष्ट कर्म करने में कोई दोष नहीं लगता। यदि स्कन्द पुराण के ही श्लोक १०४ के अनुसार २० अक्टूबर को दीपावली सिद्ध हो (क्योंकि २१ अक्टूबर को प्रदोष में अमावस्या एक दण्ड से कम हो), तो उस दिन पूजन करना शास्त्र की आज्ञा का पालन करना होगा, और शास्त्र की आज्ञा पालन करने से राष्ट्र पर आपदा नहीं आ सकती। 'रिक्ता युतायां...' का दोष तभी लगता है जब शास्त्र के विरुद्ध जाकर निर्णय लिया जाए।

और **ज्योतिःशास्त्र** कहता है कि

**दण्डैकरजनीयोगे दर्शः स्याच्च परेऽहनि ।
तदा विहाय पूर्वेद्युः परेऽह्नि सुखरात्रिका ॥
अमावास्या यदा रात्रौ दिवाभागे चतुर्दशी ।
पूजनीया तदा लक्ष्मीर्विज्ञेया सुखरात्रिका ॥**

यदि दूसरे दिन रजनीयोग में एक दण्ड तक भी दर्श हो, तो पहले दिन को छोड़कर दूसरे दिन ही सुखरात्रिका दीपावली मनानी चाहिए। जब दिन में चतुर्दशी हो और रात्रि में अमावस्या, तब उस सुखरात्रिका में लक्ष्मी की पूजा करनी चाहिए।

यदि दोनों दिनों में अर्धरात्रि में अमावस्या हो तो चतुर्दशी युक्त ही ग्रहणा करें, ऐसा आगम तंत्र ग्रंथों में कहा है

**यदोभयदिने तदा चतुर्दशीयुता ग्राह्या-
अर्द्धरात्रे महेशानि अमावास्या यदा भवेत् ।
चतुर्दशीयुताग्राह्या चामुण्डा पूजने सदा ।। इत्यागमात् ।**

यदि दिन में चतुर्दशी हो और रात में अमावस्या हो तो तब लक्ष्मी पूजन करें। यही सुखरात्रि कही गई है

Tantrakul

अमावस्या यदा रात्रौ
दिवाभागे चतुर्दशी ।
पूजनीया तदा लक्ष्मीर्विज्ञेया सुखरात्रिका ।।

इससे भी सिद्ध होता ही दीपावली पक्ष में चतुर्दशी अमावस्या युग्म में नहीं ही करनी है ऐसा कोई सिद्धान्त नहीं।

अंतिम निर्णय

विपक्ष द्वारा प्रस्तुत 'त्रिमुहूर्त' और 'युग्म-दोष' के सभी तर्क स्कन्द पुराण के दिए गए अंश के सामने पूरी तरह से ध्वस्त हो जाते हैं। स्कन्द पुराण स्वयं ही अपने वचनों से सिद्ध करता है कि:

- दीपावली का मुख्य कर्मकाल **प्रदोष** है।
- और दो दिन अमावस्या का संशय होने पर अंतिम निर्णय केवल **श्लोक १०४ (दण्डैकरजनीयोगे. . .)** के आधार पर ही किया जाएगा, अन्य किसी भी गुण-दोष के आधार पर नहीं।

अतः, स्कन्द पुराण के अनुसार, दीपावली का निर्णय करने के लिए पंचांग में केवल यह देखना है कि २१ अक्टूबर को प्रदोष काल में अमावस्या २४ मिनट तक है या नहीं। यदि नहीं है, तो २० अक्टूबर को ही दीपावली शास्त्र-सम्मत होगी, और ऐसा करने में किसी भी प्रकार का दोष नहीं लगेगा क्योंकि यह स्वयं स्कन्द पुराण की आज्ञा होगी।

निष्कर्ष: डॉ. रैणा एवं पं. शर्मा का मत शास्त्रार्थ की दृष्टि से एक दुर्बल पक्ष है क्योंकि:

Tantrakul

यह दीपावली के **विशिष्ट-नियम (प्रदोष-व्याप्ति**) पर **सामान्य-नियम (उदयव्यापिनी/साकल्यापादिता)** को वरीयता देता है, जो मीमांसा के सिद्धांतों का उल्लंघन है।

यह निर्णयसिंधु में कहा गया है: **"प्रदोषार्धरात्रव्यापिनी मुख्या"**। यह वचन स्पष्ट करता है कि वह अमावस्या मुख्य है जो प्रदोष और अर्धरात्रि दोनों में व्याप्त हो। हालांकि इसमें भी निर्णयसिन्धुकार प्रदोष को ही प्रमुख मानता है, एवं **दण्डैकरजनीयोगे...** जैसे संशय-निवारक, गणितीय एवं विशिष्ट विधि-वाक्य की पूर्णतः उपेक्षा करता है, जिसके अस्तित्व मात्र से ही **'साकल्यापादिता'** का तर्क इस संदर्भ में स्वतः खंडित हो जाता है।

अतः, यह मत **"एक वाक्य की पूंछ पकड़कर"** निर्णय करने का प्रयास प्रतीत होता है, जिसमें शास्त्र के समग्र पदानुक्रम और विभिन्न वचनों के बीच के संबंध (अंग-अंगी भाव) का विचार नहीं किया गया है। यह विद्वत्तापूर्ण शास्त्र-निर्णय की कसौटी पर सिद्ध नहीं होता।

मार्तंड, निर्णयसागर, भादवमाता आदि पंचांग नीमच मत खण्डन

निर्णयसिन्धु द्वारा दीपावली निर्णय

व्यापी ग्राह्यः - " तुलासंस्थे सहस्त्रांशौ प्रदोषे भूतदर्शयोः | उल्काहस्ता नराः कुर्युः पितॄणां मार्गदर्शनम् " इति ज्योतिषोक्तेः।

अनुवाद: "(अमावस्या) प्रदोष-व्यापिनी ही ग्रहण करनी चाहिए। जैसा कि ज्योतिष-शास्त्र में कहा गया है: 'जब सूर्य (सहस्त्रांशु) तुला राशि में हो, तब प्रदोष के समय

चतुर्दशी (भूत) और अमावस्या (दर्श) को, हाथ में मशाल (उल्का) लेकर मनुष्यों को पितरों का मार्गदर्शन करना चाहिए।'"

भावार्थ: यह दीपावली की तिथि-निर्धारण का सबसे मुख्य नियम है कि लक्ष्मी पूजन के लिए वही अमावस्या मान्य है जो प्रदोष काल (सूर्यास्त के बाद का समय) में व्याप्त हो। इस नियम की पुष्टि के लिए ज्योतिष-शास्त्र का प्रमाण दिया गया है, जो बताता है कि इस दिन प्रदोष काल का इतना महत्व है कि पितरों के लिए **'उल्कादान'** नामक एक विशेष कृत्य भी इसी समय किया जाता है।

दिनद्वये सत्वे परः - " दण्डैकरजनीयोगे दर्शः स्यात्तु परेऽहनि । तदा विहाय पूर्वेद्युः परेऽह्नि सुखरात्रिका" इति तिथितत्त्वे ज्योतिर्वचनात् ॥

हिन्दी अनुवाद: "दो दिनों तक (प्रदोष काल में) उपस्थिति होने पर, बाद वाली (परः) तिथि लेनी चाहिए। जैसा कि 'तिथितत्त्व' में ज्योतिष-वचन है: **'यदि दर्श (अमावस्या) रजनीयोग में एक दण्ड (लगभग २४ मिनट) के लिए भी दूसरे दिन से जुड़ जाए, तो पहले दिन को छोड़कर दूसरे दिन ही सुखरात्रि (दीपावली) मनानी चाहिए।'"**

भावार्थ: यह नियम उस स्थिति का समाधान करता है जब अमावस्या दो दिन तक प्रदोष काल में व्याप्त हो। ऐसे में, शास्त्र का स्पष्ट निर्देश है कि दूसरे दिन ही दीपावली का मुख्य पर्व मनाया जाए, भले ही दूसरे दिन काल में उसकी उपस्थिति अल्प समय के लिए, **रजनीयोग में एक दण्ड,** ही क्यों न हो।

दिवोदासीये तु प्रदोषस्य कर्मकालत्वात् । " अर्धरात्रे भवत्येव लक्ष्मीराश्रयितुं गृहान् । अतः स्वलंकृता लिप्ता दीपैर्जाग्रजनोत्सवाः ॥ सुधाधवलिताः कार्याः पुष्पमालोपशोभिताः " ॥ इति ब्राह्मोक्तेश्च ।

अनुवाद: "दिवोदास के मत में भी प्रदोष ही कर्मकाल है, और ब्रह्मपुराण में कहा गया है: 'अर्धरात्रि में लक्ष्मी जी घरों में आश्रय लेने के लिए निश्चित रूप से आती हैं। इसलिए घरों को सुंदर, लिपा-पुता, दीपकों से प्रकाशित, उत्सव मनाते हुए जागते हुए

लोगों से युक्त, चूने से सफेदी किया हुआ और फूलों की मालाओं से सुशोभित रखना चाहिए।'"

भावार्थ: यह अंश अर्धरात्रि के महत्व को बताता है। यद्यपि पूजन का मुख्य समय प्रदोष है, लक्ष्मी के आगमन का समय अर्धरात्रि है। इसी कारण घरों को सजाकर और रात्रि-जागरण करके उत्सव मनाने की परंपरा है।

प्रदोषार्धरात्रव्यापिनी मुख्या एकैकव्याप्तौ परैव ॥ प्रदोषस्य मुख्यत्वादर्धरात्रेऽनुष्ठेयाभावाच्च ।

हिन्दी अनुवाद: "जो (अमावस्या) प्रदोष और अर्धरात्रि दोनों में व्याप्त हो, वह मुख्य (श्रेष्ठ) है। यदि (दो दिनों में) एक-एक काल में ही व्याप्त हो, तो भी बाद वाली ही (परैव) लेनी चाहिए। (इसका कारण यह है कि) प्रदोष का समय मुख्य है और अर्धरात्रि में कोई (मुख्य) अनुष्ठान का विधान नहीं है।"

भावार्थ: यह सभी नियमों का सार प्रस्तुत करता है:

1. **आदर्श स्थिति:** वह दिन सर्वश्रेष्ठ है जिस दिन अमावस्या प्रदोष और अर्धरात्रि दोनों में हो।
2. **संघर्ष की स्थिति:** यदि एक दिन प्रदोष में और दूसरे दिन अर्धरात्रि में हो, तब भी दूसरा दिन ही चुनें।
3. **तर्क:** क्योंकि मुख्य अनुष्ठान (पूजा) प्रदोष में होता है, इसलिए प्रदोष-व्याप्ति निर्णायक है, और परैव (बाद वाली) का नियम संघर्ष का समाधान करता है।

यस्तु - " अपराह्ले प्रकर्तव्यं श्राद्धं पितृपरायणैः । प्रदोषसमये राजन् कर्तव्या दीपमालिका " इति क्रमः । स संपूर्णतिथावेव प्राप्तेरनुवादो न विधिः । तत्तत्कर्मकालव्याप्तेर्बलवत्वात्संपूर्णतिथौ प्राप्त्या खण्डतिथावप्राप्त्या विध्यनुवादविरोधाच्चेत्युक्तम् ।

हिन्दी अनुवाद: "और जो यह वचन है कि 'हे राजन्! पितरों के प्रति समर्पित लोगों को अपराह्न में श्राद्ध करना चाहिए और प्रदोष के समय दीपमालिका करनी चाहिए', यह क्रम केवल एक 'अनुवाद' है जो संपूर्णतिथि में स्वतः प्राप्त हो जाता है, यह कोई 'विधि' नहीं है। क्योंकि अलग-अलग कर्मों के लिए उनके कर्मकाल की व्याप्ति अधिक बलवान होती है, और यह योग संपूर्ण तिथि में तो प्राप्त होता है किन्तु खंडित तिथि में नहीं, जिससे विधि और अनुवाद का विरोध होता है।"

भावार्थ: लेखक यहाँ एक संभावित भ्रम का निवारण कर रहे हैं। वे स्पष्ट करते हैं कि यह श्लोक केवल एक आदर्श दिन का वर्णन करता है। इसे एक कठोर नियम मानकर खंडित तिथि का निर्णय नहीं किया जा सकता। तिथि-निर्णय के लिए ऊपर दिए गए प्रदोष-व्याप्ति के नियम ही बलवान हैं।

अत्राऽलक्ष्मीनिवारणम् । अत्रैव दर्शे पररात्रेऽलक्ष्मीनिःसारणमुक्तं मदनरत्ने भविष्ये- एवं गते निशीथे तु जने निद्रार्धलोचने । तावन्नगरनारीभिः शूर्पडिंडिमवादनैः । निष्कास्यते प्रहृष्टाभिरलक्ष्मीः स्वगृहाङ्गणात् " ॥

हिन्दी अनुवाद: "यहाँ अलक्ष्मी-निवारण (का विधान है)। इसी अमावस्या को पिछली रात में (पररात्र), अलक्ष्मी को बाहर निकालने का विधान 'मदनरत्न' में भविष्य पुराण से उद्धृत है: 'इस प्रकार जब आधी रात (निशीथ) बीत जाए और लोग नींद से भरी आँखों वाले हों, तब नगर की स्त्रियों द्वारा सूप (शूर्प) और डिंडिम (वाद्य) बजाकर, प्रसन्नतापूर्वक अपने घर के आँगन से अलक्ष्मी (दरिद्रता) को बाहर निकाला जाता है।'"

भावार्थ: यह दीपावली की रात्रि के एक लोक-अनुष्ठान का वर्णन है, जिसमें घर से दरिद्रता और दुर्भाग्य को प्रतीकात्मक रूप से बाहर निकालकर लक्ष्मी के स्थायी निवास के लिए घर को शुद्ध किया जाता है।

Tantrakul

इतना ही दीपावली लक्ष्मीपूजन निर्धारण में निर्णयसिन्धु में प्रमाण दिया है। पुरुषार्थचिन्तामणि का वचन जो पुराण समुच्चय से लिया गया है वह लक्ष्मीपूजन के निर्धारण में दिया ही नहीं है अपितु प्रतिपदा निर्धारक उसे माना गया है, क्योंकि दीपावली के लिए तो प्रदोष का ही महत्व है। आगे देखें —

यहां ये निश्चय हो गया कि प्रदत्त **पुरुषार्थचिन्तामणि वचन** दीपावली निर्णायक है ही नहीं अब धर्मसिन्धु के वचन उठा लेते हैं, जिसको भादौ माता पंचांग अपने निर्णय का आधार मान रहा है, और देखते हैं वहां क्या लिखा है।

यहां ये निश्चय हो गया कि प्रदत्त वचन दीपावली निर्णायक है ही नहीं अब **धर्मसिन्धु** के वचन उठा लेते हैं, जिसको पंचांग अपने निर्णय का आधार मान रहा है, और देखते हैं वहां क्या लिखा है।

पुरुषार्थचिंतामणौ तु पूर्वत्रैव व्याप्तिरिति पक्षे परत्र यामत्रयाधिकव्यापिनी दर्शापेक्षया प्रतिपद्वृद्धिसत्त्वे लक्ष्मीपूजादिकमपि परत्रैवेत्युक्तं।

अनुवाद: **'पुरुषार्थचिंतामणि'** में तो यह कहा गया है कि जिस पक्ष में (प्रदोष) व्याप्ति केवल पहले दिन ही हो, (उसमें भी) यदि दूसरे दिन अमावस्या तीन प्रहर (लगभग ९ घंटे) से अधिक व्याप्त हो और उसकी अपेक्षा प्रतिपदा तिथि की वृद्धि हो, तो लक्ष्मी पूजन आदि भी दूसरे दिन ही करना चाहिए, ऐसा कहा गया है।

एतन्मते उभयत्र प्रदोषाव्याप्तिपक्षेऽपि परत्र दर्शस्य सार्धयामत्रयाधिकव्यापित्वात् परैव युक्तेति भाति।

अनुवाद: इस मत **(पुरुषार्थचिंतामणि के मत**) के अनुसार, जिस पक्ष में दोनों ही दिन प्रदोष-व्याप्ति न हो, उसमें भी यदि दूसरे दिन अमावस्या साढ़े तीन प्रहर (लगभग १०.५

घंटे) से अधिक व्याप्त हो, तो 'परा' (बाद वाली) तिथि ही उचित है, ऐसा प्रतीत होता है (भाति)।

यहां धर्मसिन्धुकार भी मत है कि यदि दोनों ही दिन प्रदोष-व्याप्ति न हो तो इस मत को ग्रहण किया जा सकता है। यह कोई मुख्य निर्णायक सूत्र नहीं है।

अत: किस ग्रन्थ को पढकर ये निर्णय लेते हैं उससे ही इनके मत का खण्डन हो जाता है। पुन: **तंत्रकुल पंचांग** का 20 अक्टूबर का निर्णय ही निरपवाद रूप से शास्त्री सिद्ध होता है। एवं 21 अक्तूबर को दीपावली कहने वाले सभी पंचांगकर्ताओं के निर्णय शास्त्रों अधूरे ज्ञान व सतही मीमांसा के कारण दूषित एवं खण्डनीय हैं।

Tantrakul

दीपोत्सव के काल-निर्णय की शास्त्रीय मीमांसा: धर्मशास्त्रीय पदानुक्रम एवं पञ्चाङ्ग-निर्णय का विश्लेषण

दीपावली, कार्तिक कृष्ण अमावस्या को मनाया जाने वाला एक सर्वप्रमुख हिन्दू पर्व है। तथापि, चान्द्र-सौर पञ्चाङ्ग की प्रकृति के कारण अमावस्या तिथि प्रायः दो सौर दिवसों पर व्याप्त होती है, जिससे पर्व के सही दिन को लेकर संशय उत्पन्न होता है। यह शोध-पत्र '**पुरुषार्थचिन्तामणि**', **'पुराणसमुच्चय', 'धर्मसिंधु'** आदि धर्मशास्त्रीय ग्रन्थों में वर्णित प्रमुख सिद्धान्तों और वचनों का विश्लेषण करता है। इसमें विभिन्न श्लोकों के प्रतीत होने वाले विरोधाभास का समाधान, मीमांसा दर्शन के नियम-पदानुक्रम के आधार पर प्रस्तुत किया गया है। शोध-पत्र यह स्थापित करता है कि तिथि-निर्णय में कर्मकाल-व्याप्ति (विशेषकर प्रदोष-व्याप्ति) की अनिवार्यता है तथा विभिन्न निर्णायक सूत्र केवल योग्य तिथियों के मध्य उत्पन्न संघर्ष के समाधान हेतु हैं, न कि योग्यता प्रदान करने हेतु। इस विश्लेषण का उद्देश्य समसामयिक पञ्चाङ्ग-निर्माताओं के लिए एक स्पष्ट एवं शास्त्र-सम्मत दिशा-निर्देश प्रस्तुत करना है।

Tantrakul

प्रस्तावना

"दीपोत्सव" प्रकाश का वह पर्व है जो मुख्यतः देवी लक्ष्मी के पूजन से सम्बंधित है। इसका अनुष्ठान कार्तिक कृष्ण अमावस्या को प्रदोष काल में किया जाता है। धर्मशास्त्रीय ग्रन्थों में पर्वों का समय निर्धारण 'कर्मकाल' अर्थात् उस कृत्य के लिए निर्धारित मुख्य समय में तिथि की उपस्थिति के आधार पर किया जाता है। जब अमावस्या तिथि दो दिनों के प्रदोष काल को स्पर्श करती है, तब शास्त्र-सम्मत निर्णय की आवश्यकता होती है। क्या पर्व का दिन पूर्वविद्धा होना चाहिए अथवा परविद्धा?

यह शोध-पत्र इसी संशय की स्थिति में, शास्त्र-प्रमाणों को आधार बनाकर मीमांसा द्वारा एक सुनिश्चित निर्णय प्रस्तुत करने का प्रयास करेगा।

पूर्वपक्ष: प्रथम दृष्टया विचार

शास्त्रों में पर्व के काल का निर्धारण कर्मकाल में तिथि की उपस्थिति की प्रबलता के आधार पर होता है। दीपोत्सव का मुख्य कर्मकाल प्रदोष है तथा अर्धरात्रि में लक्ष्मी के आगमन का वर्णन होने से, अर्धरात्रि में तिथि की व्याप्ति भी अत्यन्त श्रेष्ठ मानी गई है। आदर्श स्थिति का वर्णन इस प्रकार है: "**प्रदोषार्धरात्रव्यापिनी मुख्या**" (वह अमावस्या मुख्य है जो प्रदोष और अर्धरात्रि दोनों कालों में व्याप्त हो)।
इस गुणात्मक वचन के अनुसार, जब तिथि-वृद्धि के कारण अमावस्या दो दिनों के प्रदोष काल को स्पर्श करती है, तब यह गणितीय रूप से निश्चित है कि पहले दिन ही प्रदोष और अर्धरात्रि, इन दोनों कालों का सहज संयोग सिद्ध हो जाता है। अतः, जिस दिवस में कर्मकाल की सर्वांगीण पूर्णता और आदर्श स्थिति विद्यमान हो, वही दिवस श्रेष्ठ है। इस न्याय के अनुसार, प्रथम दिवस का ही वरण करना सर्वाधिक युक्तिसंगत प्रतीत होता है, क्योंकि द्वितीय दिवस को चुनने पर आदर्श स्थिति से युक्त प्रथम दिवस का त्याग करना पड़ेगा, जो शास्त्र के मूल तात्पर्य के साथ असंगत लगता है।

सन्दर्भ-श्लोक (ब्रह्मपुराण):

अर्धरात्रे भवत्येव लक्ष्मीराश्रयितुं गृहान् ।
अतः स्वलंकृता लिप्ता दीपैर्जाग्रजनोत्सवाः ॥
सुधाधवलिताः कार्याः पुष्पमालोपशोभिताः ॥ (ब्राह्मोक्तेश्च, निर्णयसिन्धुः)

अर्थ: "अर्धरात्रि में लक्ष्मी जी घरों में आश्रय लेने के लिए भ्रमण करती हैं। इसलिए घरों को भली-भाँति अलंकृत, प्रकाशित और उत्सवपूर्ण रखना चाहिए।”

यह वचन अर्धरात्रि की महत्ता स्थापित करता है, जबकि लक्ष्मी पूजन का विधान प्रदोष काल में है। अतः, जो तिथि इन दोनों कालों में व्याप्त हो, वह आदर्श और निर्विवाद है।

सिद्धान्त-पक्ष विश्लेषण

उपरोक्त पूर्वपक्ष के उत्तर में सिद्धान्त पक्ष यह है कि यद्यपि यह तर्क सुसंगत प्रतीत होता है, तथापि यह शास्त्र के उन विशिष्ट-निर्णायक वचनों की अवहेलना करने के कारण शिथिल पड़ जाता है, जो विशेष रूप से इसी संशय के निवारण हेतु कहे गए हैं। मीमांसा दर्शन का यह स्थापित सिद्धान्त है कि एक सामान्य, गुणात्मक वचन (अर्थवाद) की अपेक्षा एक विशिष्ट, संशय-निवारक विधि-वाक्य (विधि) अधिक बलवान होता है।

३.१ कर्मकाल-व्याप्ति: योग्यता का मूल सिद्धान्त

सर्वप्रथम, दीपोत्सव के लिए किसी भी दिन पर विचार करने की न्यूनतम और अनिवार्य योग्यता यह है कि उस दिन **प्रदोष काल में अमावस्या तिथि की उपस्थिति** हो। जिस दिन प्रदोष काल में अमावस्या तिथि किंचित् मात्र भी उपस्थित नहीं है, वह दिन इस पर्व की गणना से स्वतः ही बाहर हो जाता है।

३.२ 'दिनद्वये सत्वे' संघर्ष एवं निर्णायक-विधि

संघर्ष की स्थिति केवल तभी उत्पन्न होती है, जब दो दिन इस योग्यता रूपी शर्त को पूरा करते हैं। इसी संघर्ष के समाधान के लिए शास्त्रकारों ने एक स्पष्ट विधि-वाक्य प्रदान किया है:

दण्डैकरजनीयोगे दर्शः स्यात्तु परेऽहनि ।
तदा विहाय पूर्वेद्युः परेऽहनि सुखरात्रिके ॥ स्कन्दपुराण कार्तिक महात्म्य (तिथितत्त्व)

यह कोई सामान्य श्लोक नहीं, अपितु **"दिनद्वये सत्वे"** (दो दिन व्याप्ति होने पर) की विशिष्ट परिस्थिति के लिए निर्मित एक **निर्णायक विधि** है। इस विधि के द्वारा, प्रथम दिवस के **'आदर्श'** प्रतीत होने वाले स्वरूप की उपेक्षा करते हुए, द्वितीय दिवस (परा तिथि) को ग्रहण करने का स्पष्ट आदेश दिया गया है। अतः, जहाँ विधि का साक्षात् वचन उपलब्ध हो, वहाँ अनुमान पर आधारित गुणवत्ता का तर्क दुर्बल हो जाता है।

३.३ विशिष्ट-विधि एवं उसका सीमित क्षेत्र

एक अन्य वचन, जो प्रायः संशय उत्पन्न करता है, वह इस प्रकार है:

त्रियामगा दर्शतिथिर्भवेच्चेत्सार्धत्रियामा प्रतिपद्विवृद्धौ ।
दीपोत्सवे ते मुनिभिः प्रदिष्टे अतोऽन्यथा पूर्वयुते विधेये ॥ (पुराणसमुच्चयः)

इस श्लोक का गहन विश्लेषण करने पर ज्ञात होता है कि यह दीपावली-निर्णय का मुख्य सूत्र नहीं है।

- **प्रथम**, कई निर्णायक ग्रन्थ इसे सुखरात्रि-निर्णय हेतु नहीं, अपितु प्रतिपदा-निर्णय हेतु उद्धृत करते हैं।
- **द्वितीय**, स्वयं 'धर्मसिंधु' के टीकाकार इसके विषय में कहते हैं कि यह केवल उसी स्थिति के लिए है जब दोनों दिन प्रदोष-व्याप्ति न हो। उनका कथन— "**ऐसा भान होता है**"—यह स्पष्ट करता है कि यह एक गौण एवं सैद्धान्तिक सम्भावना है, न कि एक सामान्य व्यावहारिक निर्देश।
- **तृतीय**, यह नियम केवल तभी प्रयोग में आना चाहिए जब पूर्वोक्त मुख्य नियम **(प्रदोषार्धरात्रव्यापिनी मुख्या एवं दण्डैकरजनीयोगे. . .)** किसी भी कारण से लागू न हो पा रहे हों। **एतन्मते उभयत्र प्रदोषाव्याप्तिपक्षेऽपि परत्र दर्शस्य सार्धयामत्रयाधिकव्यापित्वात् परैव युक्तेति भाति।**

यह वचन दोनों ही दिन अमावस्या प्रदोषव्यापिनी न होने पर ही प्रशस्त है। कई निर्णायक ग्रन्थ इसे सुखरात्रि निर्ण हेतु देते ही नहीं अपितु प्रतिपदा निर्णय हेतु देते हैं।

स्वयं धर्मसिन्धु जिसके आधार पर पंचांगकर्ता निर्णय दे रहे हैं उसके ही टीकाकार कह रहे हैं कि “**इस मतमें दोनों दिन प्रदोषमें नहीं व्याप्ति होवै इस पक्ष में भी परदिन में साढेतीन प्रहरसें अधिकव्यापि अमावस होनेसें परविद्धाही अमावस लेनी ऐसा भान होता है।**”

ऐसा भान होता है": यह शब्द अत्यंत महत्वपूर्ण है। लेखक यह नहीं कह रहे कि "ऐसा ही करना चाहिए"। वे कह रहे हैं कि **'पुरुषार्थचिन्तामणि'** के तर्क को यदि उसकी पराकाष्ठा तक ले जाया जाए, तो **"ऐसा प्रतीत होता है"** या **"ऐसा आभास होता है"।**
यह एक सैद्धान्तिक सम्भावना को इंगित करता है, न कि एक सामान्य व्यावहारिक निर्देश को। यह उसी स्थिति में प्रयोग में आनी चाहिए तब पूर्व "**प्रदोषार्धरात्रव्यापिनी मुख्या"** एवं **'दण्डैकरजनीयोगे दर्शः स्यात्तु परेऽहनि'** लागू नहीं हो पा रहे हों। इन दोनों की गति न होने पर ही इसकी गति स्वीकार करनी होगी।

रजनीकाल यहां कहा किसे गया है?

त्रियामां रजनीं प्राहुस्त्यक्त्वाद्यन्तचतुष्टयम् ।
नाडीनां तदुभे सन्ध्ये दिवसाद्यन्तसंज्ञके॥

सूर्यास्त के बाद की 4 घटिका और सूर्योदय से पहले की 4 घटिका को छोड़कर, बीच के समय को वास्तविक 'रजनी' संज्ञक कहा गया है, जिसकी अवधि तीन याम (लगभग 9 घंटे) होती है। यह छोड़े गए दोनों समय खंड ही 'संध्याकाल' (शाम और सुबह की संध्या) कहलाते हैं।

यदि प्रदोष ही कहना होता तो शास्त्रकार सीधे प्रदोष ही कहते क्योंकि चर्चा प्रदोष शब्द कर्मकाल निर्धारण में पुन: पुन: आ रहा है तथापि यहां रजनीकाल विषेष रूप से कहा गया है जोकि सूर्यास्त के बाद की 4 घटिका (96 मिनट) ही सिद्ध होता है जिस दृष्टि से पूरे भारतवर्ष में कहीं भी दीपावली 21 को सिद्ध नहीं होती है।

Tantrakul

तथा च, अन्य परिभाषाओं में पुरुषार्थ चिंतामणि आदि ग्रंथों में स्पष्ट रूप से वर्णित है कि सूर्यास्त के अनंतर तीन मुहूर्त तक प्रदोष एवं उसके बाद की रजनी संज्ञा होती है

नक्षत्रदर्शनात्संध्या सायं तत्परतः स्थितम्।
तत्परा रजनी ज्ञेया
पुरुषार्थ चिंतामणि।

अत: दंडैकरजनीयोगे दर्शः स्यात्तु परेऽहनि। पुराणवचन का बाध किसी निबन्धकार के वचन से सम्भव नहीं होने से 21 अक्टूबर 2025 को अमावस्या का रजनी से कोई योग भी नही हो रहा है।

४. पदानुक्रमित निर्णय-प्रक्रिया एवं समसामयिक सन्दर्भ

अतः, शास्त्र-वचनों की इस गहन मीमांसा के पश्चात्, दीपोत्सव के काल-निर्धारण हेतु निम्नलिखित पदानुक्रमित प्रक्रिया स्थापित होती है:

1. **योग्यता परीक्षण:** दीपोत्सव के लिए उसी दिवस पर विचार किया जाएगा, जिस दिन प्रदोष काल में अमावस्या तिथि विद्यमान हो। उदाहरण के लिए, यदि हम २० एवं २१ तारीख पर विचार कर रहे हैं, तो दोनों दिनों को यह योग्यता प्राप्त होनी चाहिए।
2. **आदर्श स्थिति:** यदि केवल एक ही दिवस पर प्रदोष-व्याप्ति हो, तो निःसंदेह वही दिवस पर्व का दिन है।
3. **संघर्ष का निर्णय:** यदि दो दिवसों पर प्रदोष-व्याप्ति हो, तो **दण्डैकरजनीयोगे . . .** के साक्षात् विधि-वचन के अनुसार, परा तिथि अर्थात् **द्वितीय दिवस** ही लक्ष्मी पूजन के लिए ग्राह्य है, **परन्तु शर्त यह है कि उसमें न्यूनतम एक दण्ड (२४ मिनट) की रजनीकाल-व्याप्ति हो।**

उदाहरण के लिए, यदि २१ तारीख को प्रदोष काल में अमावस्या की उपस्थिति एक दण्ड से बहुत कम हो, तो वह **दण्डैकरजनीयोगे. . .** की शर्त पूरी नहीं करती। ऐसी स्थिति में, द्वितीय दिवस निर्णायक सूत्र के बल से वंचित हो जाता है और प्रथम दिवस (२० तारीख), जिसमें प्रदोष-व्याप्ति अधिक सशक्त है, स्वतः ही शास्त्र-सम्मत सिद्ध हो जाता है। **त्रियामगा. . .** जैसे गौण वचनों की वैशाखी का प्रयोग यहाँ अप्रासंगिक है।

निष्कर्ष

इस मीमांसा का सुस्पष्ट निष्कर्ष यह है कि दीपावली का निर्णय प्रदोष-काल में अमावस्या की सशक्त उपस्थिति पर आधारित है। दो दिनों के संघर्ष की स्थिति में, द्वितीय दिवस को प्राथमिकता देने वाला नियम भी न्यूनतम एक दण्ड की व्याप्ति की अपेक्षा रखता है। यदि द्वितीय दिवस इस न्यूनतम शर्त को पूरा करने में असमर्थ है, तो प्रथम दिवस ही शास्त्र-सम्मत ठहरता है।

जैसा कि वाचस्पत्य भी स्पष्ट करता है कि

प्रदोषार्द्धरात्रव्यापिनी मुख्या, एकैकव्याप्तौ परैव ।
प्रदोषस्य मुख्यत्वादर्धरात्रेऽनुष्ठेयाभावाच्च ।

"जो (अमावस्या) प्रदोष और अर्धरात्रि दोनों में व्याप्त हो, वह मुख्य है। यदि (दो दिनों में) एक-एक काल में ही व्याप्त हो, तो भी बाद वाली ही (परैव) लेनी चाहिए। (इसका कारण यह है कि) प्रदोष का समय मुख्य है और अर्धरात्रि में कोई (मुख्य) अनुष्ठान का विधान नहीं है।"

इसकार प्रदोष व्याप्ति ही सुखरात्रि का मुख्यकाल सिद्ध होता है। अन्य सभी गौण काल है जो मुख्य के अभाव में ही लिए ये जा सकते हैं।

अतः, पञ्चाङ्गकर्ताओं से यह अपेक्षित है कि वे इन सूक्ष्म किन्तु महत्वपूर्ण नियमों का सम्यक् पालन करें और केवल एक पक्ष को देखकर निर्णय देने के बजाय, मीमांसा की इस पदानुक्रमित प्रक्रिया का अनुसरण करें। इससे जनमानस में उत्पन्न होने वाली भ्रम की स्थिति का निवारण होगा और पर्व अपने शास्त्र-निर्दिष्ट मुख्य कर्मकाल में ही सम्पन्न होगा।

सादरम्,
आचार्यः राजेशः बेंजवालः
कामख्या-अर्धत्र्यम्बक-मठः
तंत्रकुल-संस्थापकः
तंत्रकुलस्य 15000-वर्षीय-पञ्चाङ्गकर्ता
लेखकः - तत्त्वबोधप्रकाशिका, सौरसंहितातात्पर्यप्रदीपिका, महागणपतिक्रमः, शिवशब्दतत्त्वमीमांसा, श्रीतर्पणम् इत्यादयः।

सन्दर्भ-ग्रन्थ सूची:

- भट्ट, कमलाकर. निर्णयसिन्धुः.
- उपाध्याय, काशीनाथ. धर्मसिंधुः.
- भट्ट, विष्णु. पुरुषार्थचिन्तामणिः.
- तिथितत्त्व
- पुराणसमुच्चयः.
- ब्रह्मपुराणम्.
- स्कन्द पुराण
- कामाख्या तंत्र इत्यादि

Tantrakul